

महात्मा गाँधी और पर्यावरण पुष्पाजली

शोध छात्रा, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, बी० आर० ए० बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

जयप्रकाश नारायण प्रगतिशील नेता थे वे हर परिस्थिति में जनता की भलाई चाहते थे। अतः उनके जीवन में या सैद्धान्तिक प्रतिबद्धता में कोई ठहराव नहीं दिखता है। वे हर क्षण एक नई राह चुनते दिखते हैं। उनका उद्देश्य था चाहे रास्ता कोई हो जनता का कल्याण सर्वोपरी है। उनका ऐसा जुझारू नेतृत्व उन्हें युवा छवि प्रदान करता है जो अंत तक कायम रहा। जयप्रकाश नारायण की मुख्य चिन्ता थी कि जनतंत्र में जन पर तंत्र हावी न हो। लोकतंत्र का उद्देश्य तभी सफल होगा जब सही मायने में लोकशाही की स्थापना होगी। भारत के संदर्भ में जनता की स्थिति और राजनैतिक परिस्थिति में लगातार बदलाव होता रहा है। जयप्रकाश नारायण का सफर भी इसी परिउद्देश्य में देखा जा सकता है। उन्होंने अपनी राजनीतिक यात्रा की शुरुआत एक साम्यवादी के रूप में की थी लेकिन शीघ्र ही समाजवाद की ओर मुड़ गये। समाजवाद से उनका मोह भी शीघ्र ही दूर हो गया क्योंकि उन्हें इस बात का पता लगते देर न लगी कि भारत की पृष्ठभूमि न तो साम्यवाद के लिए उपयुक्त है और नहीं समाजवाद के लिए। साम्यवाद और समाजवाद की अनुपयुक्तता को समझने के साथ ही जयप्रकाश पूरी निष्ठा के साथ गांधीवाद की ओर मुड़े। यद्यपि बहुत पहले से जयप्रकाश गांधी जी से जुड़े थे। उनकी पत्नी प्रभावती देवी गांधी आश्रम में रहती थी। गांधी जी के प्रभाव में आकर ही इस दम्पति ने ब्रह्मचर्य का व्रत धारण किया था। फिर जयप्रकाश का क्रान्तिकारी मस्तिष्क कभी किसी वाद का अंधभक्त नहीं बना। यही वजह है कि सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में जयप्रकाश की भूमिका गांधी के अहिंसावाद के दायरे से बाहर निकल गई। वे इस दौरान अंग्रेजी शासन की पुरजोर विरोध में लगे थे। उन्हें साधन की शुद्धता की कोई परवाह न थी। उन्हें यह पक्का विश्वास था कि यदि साध्य शुद्ध है तो साधन की अशुद्धता से उस पर कोई नकारात्मक असर नहीं पड़ेगा। इसी विश्वास के साथ उन्होंने 1942 के आंदोलन को नेतृत्व प्रदान किया तथा एक सफल, जुझारू देश भक्ति से भरे हुए नायक के रूप में उभरे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जयप्रकाश नारायण सत्ता पक्ष में नहीं रहे। उन्होंने जनता की सेवा के लिए सदैव – विपक्ष की भूमिका निभाई। वे जवाहरलाल नेहरू से या इन्दिरा गांधी से सदैव आलोचक और विरोधी के रूप में मिलते रहें। इनकी विचारधारा और कार्यों ने एक नए भारत निर्मित करने का काम किया जिसके आलोक में कई नई शक्तियों के उत्थान का मार्ग प्रशस्त हुआ। जयप्रकाश नारायण लोकशाही के उपर तंत्रशाही के विरोधी थे। इसी का परिणाम था कि जब गया में पुलिस की लाठी जनता पर चली तो जयप्रकाश ने सरकार के इस कृत्य का भारी विरोध किया। लोकतंत्र की सफलता के लिए जन जागरण आवश्यक है। भारत की बड़ी पुरानी मान्यता रही है कि कोई नृप होए, हमें का हानि। यह सोच भारत के खेतिहर ग्रामीण समाज के इस आत्मनिर्भर इकाई में प्रारंभ हुआ था जहाँ राजा के बदलने का जनता पर कोई खास असर नहीं पड़ता था। राजतंत्र में राजा के शासन का संचालन तथा सरकार की निर्णय प्रक्रिया से आम जनता अलग – अलग रहती थी। उसे इन सभी बदलावों से कोई लेना – देना न था। उसे उसकी खेती प्यारी थी। उसकी जमीन ही उसकी अन्नदात्री माँ थी। अतः वह राजनीतिक बदलावों के प्रति रुचि विहिन थी। लेकिन लोकतांत्रिक परिदृश्य में यह खतरनाक था क्योंकि अब जनता ही सरकार निर्माता थी। जनता के रुचि और दबाव से संसद का संचालन होना था। अतः जन जागरण को स्वतंत्र भारत में नेतृत्व प्रदान करना तथा जन आकांक्षाओं को मूर्त रूप प्रदान करना अत्यंत महत्वपूर्ण था।

जयप्रकाश नारायण का अगला जुड़ाव भूदान आंदोलन से था।¹ भूदान आंदोलन की शुरुआत आचार्य विनोबा भावे के द्वारा किया गया लेकिन विनोबा के साथ जयप्रकाश नारायण भी जुड़ गये। विनोबा भावे ने

अखिल भारतीय स्तर पर दौरा किया लेकिन जयप्रकाश नारायण ने स्वयं को बिहार तक सीमित रखा। जयप्रकाश ने गाँव – गाँव का दौरा किया तथा भूदान यज्ञ के लिए जगह – जगह भूदान आश्रम बनवाया। जमीनदारों से अपील की गई कि वे भूमि का एक टुकड़ा भूमिहिनों को दान में दें। यह आंदोलन मुख्य रूप से गांधीजी के वर्ग सहयोग के सिद्धान्त पर आधारित था। जयप्रकाश नारायण साम्यवाद तथा साम्राज्यवाद का सफर तय कर के आए थे। इसलिए उन्हें साम्यवाद के प्रयोगों की त्रासदी का अंदाजा था। भारत में शोषकों और शोषितों का स्पष्ट वर्ग नहीं बन पा रहा था अतः मार्क्स के द्वन्दात्मक भौतिकवाद के सिद्धान्त को कार्यशील होते नहीं देखा जा सकता था। भारत में वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त के अनुसार परिवर्तन होना कठिन था क्योंकि यहाँ खेत, मजदूर तो थे लेकिन औद्योगिक कामगार अधिक संख्या में नहीं थे। मार्क्सवादी दर्शन के फ्रेमवर्क में मध्यम वर्ग की भूमिका शहरी कामगार निभाते हैं लेकिन भारत में इस वर्ग का अभाव था। भारत के सामाजिक और सांस्कृतिक परिपेक्ष में वर्ग सहयोग ही उपर्युक्त था।

भूदान आन्दोलन गांधीजी के विचारधारा के दायरे में रह कर ग्रामीण आर्थिक संसाधनों के पुनर्वितरण का एक प्रयास था जिसमें भूमि के एक भाग को गाँव के भूमि हीनों में बाँटा जाना था।² जमींदार समाज के शोषक वर्ग थे और जमीन का अधिकांश हिस्सा उनके पास सिमटा था। इसे ग्रामीण जनता में बाँटा जाना था। इसके लिए जमीन्दारों को नैतिकता के स्तर पर तैयार किया जाना था, यद्यपि यह कार्य आसान नहीं था फिर भी जयप्रकाश नारायण ने इसका बीड़ा उठाया बहुत सारे जमीन्दार उनकी बातों से सहमत हुए तथा भूदान में अपना योगदान किया। कई ऐसे जमीन्दार भी हैं जिन्होंने अपनी भूमि का नाम मात्र हिस्सा ही दान किया तथा बदले में वे कांग्रेस पार्टी के कार्यकर्ता बन गये। इस प्रकार से उन्होंने अपनी राजनीतिक यात्रा की शुरुआत की। कुछ जगहों पर ऐसा हुआ कि जमीन्दार ने भूमि दान में देने से इन्कार कर दिया। इन जगहों पर भूदान जैसा पवित्र यज्ञ भी – गन्दी राजनीति का शिकार हो गया। कई जगहों पर ऐसा हुआ कि जमीन किसी की और – भूदानी कोई और बन गया। आन्दोलन में एक बिखराव भी दिखा जिसमें छोटे – छोटे स्वार्थी तत्व नेता के रूप में उभर आये। उनका मुख्य उद्देश्य जमींदारी की भूमि में से जितना हो सके उतने हिस्से पर अपना हक जताना तथा, किसी प्रकार उसे अपने कब्जे में लेना था। इस क्रम में इन्होंने कई आपराधिक छवि वाले लोगों का सहारा भी लिया। इस प्रकार से जमीन हथियाने वाले स्वार्थी तत्व मुख्य रूप से अगड़ी जाति के लोग थे। कुछ स्थानों पर जमीन्दारों की भूमि पर काम करने वाली पिछड़ी जातियाँ, जैसे यादव, कुर्मी, नोनीया जैसी जातियाँ भी दावेदार थी और उन्होंने किसी तरह से जमीन पर हक जताने का प्रयास किया। यद्यपि समाज की निम्नतम जातियाँ जैसे – डोम, हलखोर, मुशहर, चमार आदि ने इसमें सक्रिय भूमिका नहीं निभाई। फिर भी भूदान की सफलता या विफलता ने बिहार प्रान्त की अगली राजनीति के लिए दिशा तय की तथा एक नये रास्ते का निर्माण किया। कांग्रेस में गए नए प्रकार के नेता जो विगत में जमीन्दार थे प्रतिक्रियावादी नहीं रह सके। वे धीरे – धीरे प्रगतिशील बन गये या दूसरे शब्दों में वे राजनीति से जनसेवा के मार्ग पर चल पड़े। भूदान का दूसरा असर यह पड़ा कि गाँव के शांत राजनीतिक माहौल में अब यथास्थितिवाद रहना असंभव था। भूदान ने कई प्रकार से उत्प्रेरक का कार्य किया। एक और जमीन्दार अपनी भूमि को काश्तकारी अधिनियम में लाने तथा उसको अपने या अपने सम्बन्धियों के नाम पर लाने के लिए बेचैन हो गये। उन दिनों भूमि को दो वर्गों सिंचित तथा असिंचित में बाँटा गया। सीलिंग ऐक्ट लाया गया। एक व्यक्ति अथवा परिवार के नाम पर भूमि का अधिकतम क्षेत्रफल तय किया गया। बेनामी जमीन खोजी जाने लगी। ऐसे जमीनों का बिहार सरकार के नाम पर बंदोबस्त किये जाने की व्यवस्था की गई। सरकार के इन सब फैसलों ने अधिक जमीन रखने वाले लोगों में बेचैनी बढ़ा दी। इस प्रकार समाज के कई ऐसे लोग गाँव में जीवन जी रहे थे स्वयं को असुरक्षित महसूस करने लगे। कई लोगों ने यह किया कि जमीन बेच कर वे पूंजी किसी व्यवसाय में निवेश करने लगे। इससे गाँव अब धीरे – धीरे खाली होने लगा तथा शहरों की जनसंख्या और जमीन का दाम दोनों तेजी से बढ़ने लगे। भूदान आंदोलन का अन्य असर था पिछड़े तथा निम्न वर्गों में अपने अधिकार तथा प्रतिष्ठा में बढ़ोतरी की महत्वाकांक्षा। भूदान ने एक आशा की किरण जगाया की समाज के वंचितों का जमीन पर हक है। वह जमीन जिसे जोत रहे थे, उसपर उनका हक है। वे इस जमीन को जोत सकते थे। उस पर उनका मलिकाना हक है। भूदान ने समाज के इस वर्ग में चेतना का जागरण किया। उसी दौरान त्रिवेणी संघ का गठन हुआ जिसमें यादव, कोईरी और कुर्मी जातियाँ शामिल हुए। जनेऊ आंदोलन प्रारंभ हुआ जिसमें समाज की पिछड़ी जातियों ने जनेऊ धारण करना प्रारंभ किया।³

इस प्रकार उद्भव के लिए स्वयं को स्वर्णिम अतीत से जोड़ने का प्रयास शुरू हुआ। जैसे कोईरी ने स्वयं को भगवान राम के पुत्र कुष का वंशज साबित करने का प्रयास किया। एक अन्य रूपक से इस जाति को चंद्रगुप्त मौर्य से जोड़ा गया। अधपि यह जाति खेती से जुड़ी थी लेकिन नवीन अवसरों में भागीदारी निभाने

के लिए यह आवश्यक था कि उन्हें सवर्णों के समकक्ष बताया जाये। इस प्रकार कुर्मी जाति ने स्वयं का सम्बन्ध विष्णु भगवान के कुमावतार से जोड़ने का प्रयास किया। यादवों ने स्वयं को कृष्ण का वंशज बताया। दुसाधों ने स्वयं को क्षत्रिय कहा। वे क्षत्रियों के ऐसे वंशज थे जो परशुराम के कोप से किसी प्रकार बच गये हों। स्वर्णिम अतीत की खोज ने एक बात साबित कर दिया कि उन जातियों का वर्तमान अंधकारमय था। यह खोज और जनेऊ धारण करना मूलतः बेगार से छुटकारा दिलाने तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की तलाश थी। इन सभी जद्दोजहद में अंततः बिहार में सामाजिक न्याय आंदोलन का मार्ग प्रशस्त किया। बिहार में पिछड़े वर्ग की राजनीति तथा मंडल कमिशन की रिपोर्ट पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण आदि बदलाव के लिए शह निर्मित हुई।

जयप्रकाश नारायण ने मुशहरी में नक्सली नेताओं से बात की तथा उन्हें पुनः समाज की मुख्य धारा में लाने में सफलता हासिल की। ये सभी नेता माओवादी थे। ग्रामीण जमीन के पुनर्वितरण का यह दूसरा प्रयास था। इस आंदोलन की जड़ें चीन में थी। माओवादी आंदोलन की शुरुआत माओत्से तुंग ने की। मुख्य प्रेरक वाक्य था 'शक्ति बंदूक की नली से आती है'। इसका अर्थ है कि इस आंदोलन की राह रक्त रंजित राह से होकर जाती थी। हिंसावाद ने अंततः समाज के असामाजिक तत्वों को उभारने का काम किया। निहित स्वार्थ ने सिद्धान्त का सहारा लेकर अपनी लिप्सा पुरा करने का काम किया।⁴

अब जयप्रकाश बिहार में छात्रों के सम्पर्क में आए। दरअसल, पूरे बिहार विश्वविद्यालय के छात्रों को अपनी दैनान्दिनी समस्याओं में अच्छा खाना, छात्रावास की सुविधा, छात्रवृत्ति की राशि, पढ़ाई आदि को लेकर अक्सर जुलूस प्रदर्शन के लिए बाध्य होना पड़ता था। इसी समय मगध विश्वविद्यालय के कुलपति ने बिहार के तत्कालीन शिक्षा मंत्री विध्याधर कवि के पुत्र को नाजायज ढंग से ग्रेस मार्क्स देकर उत्तीर्ण कर दिया। आरा के छात्र इस ग्रेस मार्क्स को वापस लेने या फिर आम छात्रों के लिए प्रति वर्ष इसे नियम के रूप में चालू करने की मांग कर रहे थे। इसके अलावा परीक्षा और केन्द्र सम्बन्धी भी उनकी कुछ माँगें थीं। जब इन माँगों पर ध्यान नहीं दिया गया तो पूरे भोजपुर के छात्र कक्षा बहिष्कार पर उतर आए। अब नारा था – माँगें पूरी हो या विधाकर कवि हटाए जाएँ। धीरे – धीरे पूरे बिहार के छात्र इससे जुड़ते गए। 8 फरवरी 1974 को बिहार राज्य छात्र नेता सम्मेलन बुलाया गया, जिसमें पटना और बिहार विश्वविद्यालय के छात्र प्रतिनिधि शामिल हुए। फिर 17-18 फरवरी को राज्य के सभी विश्वविद्यालय छात्र संघों तथा विभिन्न संगठनों का दो दिवसीय प्रान्तीय सम्मेलन पटना में आयोजित हुआ। इसमें 70 कॉलेजों के 250 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इसी सम्मेलन में आठ सूत्री माँगें सूत्रबद्ध की गईं और राजव्यापी आंदोलन छेड़ने का फैसला किया गया। ये माँगें थी – प्रत्येक महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में छात्र संघ की स्थापना, रोजगारोन्मुख, शिक्षाव्यवस्था, राष्ट्रीयकृत बैंकों से शिक्षित बेरोजगारों को व्यवसाय के लिए ऋण, शिक्षित बेरोजगारों को काम का बेरोजगारी भत्ता, महंगाई पर रोक तथा जमाखोरों मुनाफाखोरों की गिरफ्तारी और सरस्ते दरों पर छात्रों को भोजन तथा पाठ्य सामग्री की आपूर्ति, कॉलेजों में छात्रावास की व्यवस्था, छात्रवृत्तियों की संख्या में बढ़ोतरी तथा वर्तमान मूल्य सूचकांक के आधार पर छात्रवृत्ति की रकम का निर्धारण और विश्वविद्यालयों की नीति – निर्धारक समितियों (सिनेट, सिंडिकेट, एकेडेमिक काउन्सिल) में छात्रों का प्रभावी प्रतिनिधित्व तथा सम्मेलन में प्रदेश छात्र संघर्ष समिति का निर्माण किया गया, 24 सदस्यीय संचालन समिति गठित की गई और सरकार को यह चेतावनी दी गई कि अगर वह माँगों को पूरा नहीं करती तो 18 मार्च से खुलनेवाले विधानसभा का घेराव किया जाएगा। पूरे बिहार में धरना, जुलूस का ताँता लग गया। 24 फरवरी को मुख्यमंत्री आवास के सामने 200 छात्रों ने अनशन किया। 25 फरवरी से पटना में धारा 144 लागू कर दी गई और सभी शिक्षण संस्थाओं को बन्द कर दिया गया।

फिर आया 18 मार्च, 1974 का दिन पूरा पटना हर बार विद्यार्थी जीता है, इस बार भी विद्यार्थी जीतेगा, गुजरात की जीत हमारी है, अब बिहार की बारी है, जैसे नारों से गूँज उठा। नाकेबन्दी और बांस – बल्लियों के घेरो के बावजूद सचिवालय जाने वाली सड़कों पर छात्रों का सैलाब उमड़ पड़ा। छात्रों का जत्था सचिवालय पहुँचा ही था कि उस पर बीएसपी और सीआरपीएफ के जवान टूट पड़े। दर्जनों छात्र बुरी तरह घायल कर दिए गए, सैकड़ों हमले हुए, पटना बारूद और धुँए की गंध से भर गया। शाम से कर्फ्यू लगा दिया गया। आग पूरे बिहार में फैल गई। 18 से 22 मार्च के बीच बिहार के कई शहरों में कर्फ्यू लगा। 23 मार्च के गोलीकाण्ड के विरोध में पटना में आयोजित बन्द पूर्णतः सफल रहा। अब विधानसभा भंग करो मुख्य माँग बन गई। छात्र नेताओं ने जयप्रकाश नारायण से नेतृत्व प्रदान करने का अनुरोध किया। जेपी की तीन शर्तें थीं – शान्तिपूर्ण संघर्ष, किसी भी राजनीतिक पार्टी से संबंध – विच्छेद और आन्दोलन के लिए एक साल का समय त्याग। 29 मार्च को जेपी आन्दोलन में शामिल हो गए। उसी दिन पीठ पीछे हाथ बाँधकर एक विशाल मौन जुलूस निकाला गया, हमला चाहे जैसा हो, हाथ हमारा नहीं उठेगा।⁵

आन्दोलन का दूसरा चरण 9 अप्रैल से सरकार ठप्प करो, विधान सभा भंग करो, के नारे के साथ शुरू हुआ। अब संघर्ष ने एक व्यापक जन आन्दोलन का रूप धारण कर लिया था। एक निश्चित समय पर प्रत्येक घर में थाली पीटना, एक साथ रौशनी गुल कर देना, चित्र प्रदर्शनी, साईकिल जुलूस, चूहा जुलूस, गदहा जुलूस, मंत्रियों का जनाजा जुलूस, सरकारी समारोहों का बहिष्कार आदि विभिन्न रूप अंगिकार किए जाने लगे। कला संगम जैसी नाट्याओं ने जनजागरण के लिए नुक्कड़ नाटक खेले। नागार्जुन और फणीश्वरनाथ रेणु ने भी आंदोलन के क्रम में सामयिक वार्ता, घर – गृहस्थी, तरुण क्रांति जैसी पत्रिकाएँ प्रकाशित करनी शुरू की।⁶ छात्र – युवा संघर्ष वाहिनी जैसे संगठन अस्तित्व में आए। वाहिनी के कार्यकर्ता शान्तिमय वर्ग संघर्ष संगठित करने के लक्ष्य के साथ गाँव के गरीब किसानों और खेत मजदूरों के बीच गये। गया, मधुबनी, चम्पारण, भागलपुर के दियारा क्षेत्रों में विभिन्न रचनात्मक कार्यों के साथ – साथ उन्होंने मठों – महंथों, बड़े भुस्वामियों और नदी के टेकेदारों के खिलाफ गरीब – गुरबों में नई चेतना जगाई और उन्हें संगठित किया। इनमें सर्वाधिक चर्चित हुआ बोध गया के खिलाफ संघर्ष और गंगा मुक्ति आंदोलन। बहरहाल, इधर 5 जून 74 को गांधी मैदान की विशाल सभा में जेपी 'सम्पूर्ण क्रान्ति अब नारा है, भावी इतिहास हमारा है' नाम दे चुके थे। आन्दोलन कस्बों और गाँवों तक जा फैला था। गाँवों में जनसमितियाँ बनाई गई, अनाज गोदामों, कालाबाजारियों के गोदामों पर छात्रों के दस्तों ने छापामारी की और जनता के बीच अनाज का वितरण किया गया। कांग्रेसी मंत्रियों और विधायकों का कहीं भी आना जाना दूभर हो गया। इसी प्रचण्ड जनउभार के बीच 4 नवम्बर 1974 को आयोजित जुलूस पर बर्बर लाठी चार्ज हुआ। जेपी को भी लाठी लगी। बिहार आन्दोलन अब इंदिरा सरकार के खिलाफ देशव्यापी आन्दोलन का रूप ग्रहण करने लगा। विपक्षी पार्टियाँ भी आन्दोलन के साथ जुड़ गईं। बिहार के विपक्षी विधायकों ने जेपी के आह्वान पर विधानसभा से इस्तीफा दे दिया था। अब उनका नारा था, सुन लो ऐ दिल्ली की रानी, नहीं चलेगी अब मनमानी। इसी उथल – पुथल के बीच 1975 में आपातकाल की घोषणा हुई।⁷ खल्क खुदा का मुल्क बादशाह का

जयप्रकाश नारायण के जीवन का अंतिम प्रयास इन्दिरा गांधी सरकार के तानाशाही के खिलाफ था। सन् 1975 में इंदिरा गांधी ने राष्ट्रीय आपात की घोषणा कर दी। इसके पूर्व उन्होंने कई ऐसे फैसले लिये थे जिससे उनकी लोकप्रियता हार गई थी। इनमें से एक था जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रम – लक्ष्य पूरा करने के लिए कर्मचारियों ने धर – पकड़ कर नसबंदी करना प्रारंभ किया। सरकारी फैसलों को लागू करने के लिए इंदिरा गांधी के पुत्र संजय गांधी का रवैया तानाशाही में भरा होता था। इस दौरान असंतोष काफी बढ़ गया। सम्पूर्ण क्रांति के समय बिहार में छात्रों के आन्दोलन को रोकने के लिए मीसा और डी० आई० आर० जैसे निषेधात्मक कानून लागू किये गये। बड़ी संख्या में आन्दोलनकारियों को जेल में डाला गया। इसमें छात्र बड़ी तदाद में होते थे।⁸ जुलूस और प्रदर्शन के दौरान सरकार की लाठियाँ खूब बरसती थी। आंसु गैस के गोले, पानी की बौछार तथा हवाई फायर से जनता को नियंत्रित करने का प्रयास किया गया। इस आन्दोलन ने नये नेतृत्व को जन्म दिया। नेतृत्व के नए रूप में लालू प्रसाद यादव, नीतिश कुमार, सुशील कुमार मोदी, जॉर्ज फर्नांडीस आदि नेताओं का भी राजनीतिक सफर प्रारंभ हुआ।⁹

जैसा की हम पहले ही देख चुके हैं इस समय तक महाविद्यालय और विश्वविद्यालय के छात्रों की सामाजिक संरचना में काफी परिवर्तन आ चुका था। आन्दोलन की व्यापकता और तीव्रता का इस परिवर्तन से गहरा रिश्ता था। गाँवों में बड़ी संख्या में आए पिछड़ी जातियों के छात्रों को स्वभावतः इन समुदायों का सहज ही समर्थन हासिल हो गया। किसी छात्र आन्दोलन को गाँवों – कस्बों तक इतनी व्यापकता पहले कभी नहीं मिली थी। इसके साथ जुड़ा था महँगाई के लगातार बढ़ते बोझ से उपजा आम असन्तोष। 1974 के अगस्त में मुद्रास्फीति तीस फीसदी जा पहुँची थी। इस आंदोलन के उपरांत पिछड़ी जातियों के बीच से नेतृत्व की पीढ़ी सामने आई, जिसने कालक्रम में पुरानी पीढ़ी के नेताओं को धकेल कर पीछे कर दिया। इसकी हम आगे भी चर्चा करेंगे। यहाँ बस इतना कहना काफी होगा कि सामाजिक प्रश्नों पर केन्द्रित न होने के बावजूद इस आन्दोलन ने समाज के अन्दर शक्ति संतुलन में हो रहे बदलाव की प्रक्रिया को गति प्रदान की और नेतृत्व की नई पीढ़ी के लिए पाठशाला का काम किया। पुराने नेताओं के पास 'पहली आजादी' के संघर्ष का संदर्भ होता, नए नेताओं के पास, दूसरी आजादी के लिए संघर्ष का। एक के पास गांधी से जुड़े किस्से थे, दूसरे के पास लोकनायक जयप्रकाश के संस्मरण। एक के चरित्र प्रमाण – पत्र में 42 के आन्दोलन में लाठी खाने और जेल जाने का अनुभव दर्ज था, तो दूसरे के पास 74 के आन्दोलन में पुलिस से पिटने और इमर्जेंसी के काले दिनों में नजरबन्दी का अनुभव। 22 जून 1977 को कर्पूरी ठाकुर के नेतृत्व में जनता सरकार का गठन हुआ। करीब साढ़े आठ महीने बाद 9 मार्च, 1978 को कर्पूरी मंत्रिमण्डल ने 1 अप्रैल से राज्य में पिछड़ी जातियों के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण लागू करने का फैसला किया। इस निर्णय के तहत अन्य पिछड़ी जातियों को

8 प्रतिशत अति पिछड़ी जातियों को 12 प्रतिशत, महिलाओं को और आर्थिक रूप से पिछड़े सवर्णों को 3 – 3 प्रतिशत आरक्षण दिया जाना था। दरअसल, दरोगा प्रसाद राय सरकार ने मुंगेरी लाल की अध्यक्षता में पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन किया था। लेकिन उसकी अनुशंसाओं पर कांग्रेस की सरकार ने 1972 से 77 के बीच कोई कार्यवाई नहीं की।¹⁰

सम्पूर्ण क्रांति ने सत्ता और शक्ति का विकेन्द्रीकरण किया। इस प्रक्रिया ने कई नए ध्रुवों का निर्माण किया, जहाँ से भारतीय लोकतंत्र में नई प्रवृत्तियों के उदय की शुरुआत होती है। इस आन्दोलन से निकले नए नेता पुरानी राजनीतिक धारा के उत्तराधिकारी नहीं थे, बल्कि उन्होंने नई राजनीतिक धारा नये नारे तथा कई नये सपनों के साथ नई शुरुआत की। इस प्रकार सन् 1980 तथा सन् 1990 के दशक का भारत पुराने परम्परागत राजनीति से अलग था, और इस राजनीति का निहितार्थ समतावादी सर्वसमावेशी और विकासमूलक समाज की स्थापना था।

संदर्भ – सूची

1. नारायण, जयप्रकाश ; मेरी विचार पृ. 29।
2. नारायण जयप्रकाश ; मेरो विचार यात्रा पृष्ठ – 47।
3. नारायण जयप्रकाश ; समाजवाद सर्वोदय और लोकतंत्र पृष्ठ – 137– 138।
4. डा० सच्चिदानंद ; जे०पी० और भूमि सुधार प्रथम पत्रिका जयप्रकाश अध्ययन एवं शोध केन्द्र महिला चरखा समिति पटना), 1992, पृष्ठ – 90।
5. नारायण जयप्रकाश, संपूर्ण क्रांति के लिए आहवाहन पृष्ठ – 9।
6. वहीं पृष्ठ 6।
7. वहीं पृष्ठ – 41।
8. राममूर्ति आचार्य,, जे० पी० की विरासत, सर्व सेवा संच प्रकाशन, वाराणसी, 2000. पृष्ठ – 36।
9. नारायण जयप्रकाश, टू ऑल मेंबर्स ऑफ पार्लियामेंट दिल्ली. 1973 पृष्ठ – 5 – 7।
10. शिवदेव नारायण राय, अवकाश; 16 – 31 अगस्त 1979 ।

* * * * *